सवाई माधोपुर जिले में जल संसाधन की समस्याए एवं समाधान

***अनिल कुमार धाकड़**

शोध सारांश

प्रकृति के पाँच उपादानों में जल सबसे महत्वपूर्ण है जो पृथ्वी पर जीवन के लिये अति आवश्यक है। जल का उपयोग मानवीय जीवन और विकास के लिए किया जाता है। साथ ही वह सम्पूर्ण जीवन चक्र के लिए महत्वपूर्ण है। जल हमेशा से ही सभ्यताओं का अवलंब रहा है। लगभग सभी प्राचीन सभ्यताएँ जल के नजदीक ही विकसित हुयी है। जल सदा ही अपरिहार्य रहा है, न केवल मानवीय विकास के लिए बल्कि कृषि और अन्य गतिविधियों के विकास के लिए भी आवश्यक है। पृथ्वी को अक्सर जलग्रह कहा जाता है क्योंकि इसके 70.8 प्रतिशत भाग पर महासागरों का विस्तार है। विश्व के जल–भण्डार का केवल एक प्रतिशत भाग ही हमारे उपयोग योग्य है। लगभग 97 प्रतिशत जल समुद्री खारा जल है, और पृथ्वी के कुल जल–भण्डार का 2.7 प्रतिशत ही स्वच्छ जल है। इस 2.7 प्रतिशत का भी काफी हिस्सा हिमनदों और पर्वतों की चोटियों पर जमा हुआ है। अतः विश्व का जल बहाव हमारे जीवन के लिए आवश्यक व अनमोल है।

6 मार्च 2003 की प्रेस ट्रस्ट ऑफ इण्डिया की एक रिपोर्ट/प्रतिवेदन के मुताबिक संयुक्त राष्ट्र द्वारा पृथ्वी के जल संसाधनों की गुणवत्ता के आकलन में भारत का स्थान 120वाँ था। इससे नीचे केवल मोरक्को और बेल्जियम थे। भारत में प्रति व्यक्ति प्रति वर्ष जल की उपलब्धता 1880 घन मीटर है और 180 देशों में जल उपलब्धता के मामले में भारत का 133वाँ स्थान है। भारत में औसत वार्षिक भू–जल प्रवाह 186.9 मिलियन हेक्टेयर मीटर है, जिसमें समुचित संग्रहण के साथ केवल 69 मिलियन हेक्टेयर मीटर का ही उपयोग हो पाता है। सम्भावना और वास्तविक उपलब्धता में इस बड़े अन्तर का कारण स्थलाकृति और भूगर्भीय सीमाओं के अलावा मानसून है। सालभर में वर्षा केवल चार माह होती है, लेकिन व्यवहारिक रूप से वर्षा का वितरण इतना असमान है कि इसके वार्षिक औसत का कोई महत्व नहीं रहता। वास्तव में, देश के एक तिहाई हिस्से में हमेशा सूखे का खतरा रहता है जो वर्षा की कमी के कारण नहीं, बल्कि उसकी अनिश्चितता, असमानता एवं वितरण के कारण है। वर्षा की ''प्रचुरता व कमी'' के कारण बाढ़ और सूखे की स्थिति उत्पन्न होती है।

भू–जल के अलावा पुनः पूरणीय भू–जल स्त्रोत भी हैं। इसकी क्षमता 43.2 मिलियन हेक्टेयर मीटर आँकी गई है इसमें पुनः पूरणीय नहर सिंचाई भी शामिल है। इसका अर्थ है कि भारत में सन् 2050 में कुल उपलब्ध जल 23001 हेक्टेयर मीटर होगा और उसकी प्रति व्यक्ति उपलब्धता 1403 मिलियन होगी। इस प्रकार अगर कुल उपलब्ध जल को शामिल कर लिया जाये तब भी देश में पानी की कमी का दबाव बना रहेगा। संभवतः 2050 तक देश की जनसंख्या 1640 मिलियन हो जायेगी। आबादी का आधा भाग शहरी व आधा भाग ग्रामीण होगा। उसकी घरेलू जरूरतों शहरी क्षेत्रों में 200 लीटर प्रति व्यक्ति प्रतिदिन और ग्रामीण क्षेत्रों में 100 लीटर प्रति व्यक्ति प्रतिदिन तक सीमित कर दिया जाये तब भी 9 एम.एच.एम. जल की आवश्यकता होगी। ध्यातव्य है कि भू–जल शहरी जरूरतों को कम ही पूरा करता है, लेकिन सम्पूर्ण ग्रामीण जरूरतें इससे पूरी होती है।

वृद्धि की प्रक्रिया और आर्थिक गतिविधियों में तेजी से अवश्यम्भावी रूप से विविध उद्देश्यों के लिए जल की आवश्यकता बढ़ती है। विविध उद्देश्यों में घरेलू, औद्योगिक, कृषि सम्बन्धी, जल–ऊर्जा संबंधी, नौसेना, मनोरजन आदि–आदि। पानी का सबसे अधिक उपयोग सिंचाई में होता है। जल की कमी से कृषि उत्पादकता विशेषकर खाद्य–उत्पादकता में कमी आती है। इससे खाद्यान्न की कमी होती है और खाद्य–सुरक्षा का मुद्दा भी सामने आता है। भारत का जल–संसाधन और कृषि–भूमि सीमित है, लेकिन उसे बढ़ती हुई विशाल जनसंख्या का भरण–पोषण करना होता है। राष्ट्रीय जल संस्थान के मुताबिक भारत की जनसंख्या विश्व जनसंख्या का 16 प्रतिशत है जबकि उसके मुकाबले नदियों में औसत वार्षिक जल प्रवाह 4 प्रतिशत ही है।

जल संसाधनों के व्यवस्थित और वैज्ञानिक विकास को ध्यान में रखते हुए देश में सन् 1987 में राष्ट्रीय जल नीति अपनाई थी। अप्रेल 2002 में राष्ट्रीय जल संसाधन संगठन ने अपनी पाँचवीं बैठक में राष्ट्रीय जल नीति स्वीकृत की है। राष्ट्रीय जल संसाधन नीति संबंधी दस्तावेज के अनुसार ''जल मुख्य प्राकृतिक स्त्रोत है, बुनियादी मानवीय आवश्यकता और अमूल्य राष्ट्रीय सम्पत्ति है। जल संसाधनों की नीति और विकास को राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में अपनाए जाने की आवश्यकता है।'' देश और काल दोनों ही स्तरों पर जल उपलब्धता असमान है। वर्षा साल के केवल तीन–चार महीनों में ही होती है और पश्चिमी राजस्थान में अगर उसका औसत 10 सेंटीमीटर है तो चेरापूंजी, मेघालय में वर्षा 300 सेमी से अधिक होती है। इस बीच, पेयजल, सिंचाई, बढ़ती जनसंख्या के कारण जल की आवश्यकता बढ़ती ही जा रही है। हम पूर्ण अभाव की दिशा में बढ़ रहे हैं। भूजल प्रबंध एक कठिन अवधारणा है। यह 85 प्रतिशत ग्रामीण पेयजल और 55 प्रतिशत शहरी पेयजल का स्त्रोत है। इस पर निर्भरता इसलिए भी बढ़ी है क्योंकि सतही जल स्त्रोत, विशेषकर नदियाँ बढ़ती जनसंख्या, शहरी गंदगी और औद्योगिक कचरे से प्रदूषित हुई है जिससे सतही जल की गुणवत्ता एवं उपलब्धता में कमी आती गयी है। यहाँ तक की मनुष्यों की बुनियादी जरूरतों को आराम से पूरा कर सकने वाले सामुदायिक जल स्त्रोत भी विफल हुए हैं। देश में दस लाख हैण्डपम्प हैं, जो संसार में सर्वाधिक है। पुर्नःभरण की उपयुक्त व्यवस्था के अभाव में जल का निकास लगातार होता जा रहा है जिससे स्थिति लगातार भयावह होती जा रही है। जल संकट को कम करने और उस संबंध में उपायों को सुझाने तथा हल खोजने की जिम्मेदारी प्रत्येक व्यक्ति की है। भूमिगत जल के रिक्तीकरण की समस्या, लचर प्रबन्धन, कम कृषि–उत्पादकता, जलवायु की विविधता इन सबका कारण जल संसाधन ही है। जल हर व्यक्ति की आधारभूत आवश्यकता है बिना जल के जीवन की कल्पना मुश्किल है। आज भी लाखों लोगों को सतत् स्वच्छ जल उपलब्ध नहीं है। जल संबंधी नीतियाँ, कार्यक्रमों, प्रयोगों, नवोन्मेषों को हर स्तर पर प्रचारित किए जाने की आवश्यकता है ताकि हर व्यक्ति इस संबंध में जागरूक हो सकें।

20वीं शताब्दी में सम्पूर्ण विश्व का ध्यान खनिज तेल पर था। 21वीं शताब्दी में विश्व का ध्यान सुरक्षित और पर्याप्त पेयजल उपलब्धता पर है। अगर जल को ऐसे संसाधन के रूप में देखा जाता रहेगा, जिसका मूल्य चुकाकर उसका उपयोग या दुरूपयोग किया जा सकता है तो जल संरक्षण के क्षेत्र में कोई बड़ी उपलब्धि हासिल नहीं की जा सकेगी। हमारे देश में जल–संसाधन नियोजन की तकनीकों की प्राचीन परम्परा रही है। आधुनिक विज्ञान के साथ उसके समायोजन से जल समस्या का समाधान ढूँढा जा सकता है। कई स्थानों पर लोगों ने जल समस्या के नए वैकल्पिक समाधानों के बारे में सोचना शुरू कर दिया है। उनका आधार जल–सरंक्षण की परम्परागत तकनीक रही है और उसकी वजह से आर्थिक रूप से पिछड़े क्षेत्र आज वैभवपूर्ण क्षेत्र बन गए हैं। वर्षा जल संरक्षण की परम्परागत तकनीक के अनेक लाभ हैं। इस तकनीक के प्रयोग से अर्थव्यवस्था में तीव्र सुधार, कृषि–उत्पादकता में वृद्धि और इसकी प्रबन्धन तकनीक के रख–रखाव पर भी अधिक खर्च नहीं आता है। उनकी उत्तरजीविका भी काफी होती है। इस ''मरती मेघा'' के पुनराविष्कार की आवश्यकता है ताकि जल संसाधन प्रबंधन के इस परम्परागत स्त्रोत को आज की आवश्यकताओं के अनुरूप बनाया जा सके।

पिछले कुछ वर्षों में विकास और विकास प्रक्रियाओं में जल के महत्व की चेतना बढ़ी है। भूत, वर्तमान, भविष्य के समस्त समाजों को विकास और जीवन के लिए पर्याप्त स्वच्छ जल की आवश्यकता होती है। साथ–ही–साथ स्वच्छ जल की उपलब्धता भौगोलिक और जलवायविक कारणों से प्रभावित होती रही है और मानवीय सभ्यताओं ने इन परिस्थितियों को अनेक प्रकार से प्रभावित किया है, उनका अनेक प्रकार से दोहन किया है। इसकी जानकारी के लिए कि किस तरह स्वच्छ जल की कमी ने विकास के सामने अनेक बाधाएँ खड़ी की हैं, विकासशील देशों की विकास नीतियों के अध्ययन की आवश्यकता है। जल की उपलब्धता बुनियादी रूप से देशों के बीच असमानता बढ़ाती है और एक ही देश के गरीब और अमीर के बीच की खाई को भी बढ़ा देती है। यह विकासशील देशों के निवासियों के स्वास्थ्य को भी प्रभावित करती हैं क्योंकि विकासशील देशों में जलजनित रोग मृत्यु का सबसे बढ़ा कारण हैं। स्थानीय स्तर पर जल की उपलब्धता सांस्थानिक विकास और आर्थिक नीति को प्रभावित करती है। विभिन्न प्रकार की आर्थिक गतिविधियाँ महत्वपूर्ण जल स्त्रोत के पास अवस्थित होती है, साथ ही शहरीकरण भी इससे प्रभावित होता हैं। विश्व के कई बड़े नगर जल–समस्या से जूझ रहे हैं। पर्याप्त स्वच्छ जल कृषि (विश्व में उपयोग किए जाने वाले जल का 60 प्रतिशत सिंचाई के काम आता है) उद्योगों (18 प्रतिशत जल–संसाधन औद्योगिक कार्य के लिए उपयोग किया जाता है) और शहरी जीवन में सुधार के काम आता है। जल–उपयोग संबंधी

अपनी प्राथमिकताओं को तय करना आज हर देश की विकास नीतियों का प्रमुख मुद्दा है।

अधिकारीगण, राजनेता, धनाढ्य और सामान्य लोग तथ्य से सहमत हैं कि परम्परागत जल–संरक्षण तकनीक जल स्त्रोत के पुनःपूरण (पुर्नभराव) के लिए अति आवश्यक है। जल–संग्रहण और प्रबंधन तकनीक विकास संबंधी प्रयासों और सहकारी भाव की मांग करते हैं जिससे हमारी जीवन रेखा के भूत, वर्तमान और भविष्य को ''जल है अनमोल'' से जोड़ा जा सके। इसलिए सवाईमाधोपुर जिले के जल संसाधन का उपयोग एवं प्रबन्धन का अध्ययन जल उत्पादकता बढ़ाने के लिए चुना गया।

उद्देश्य

1. अध्ययन क्षेत्र की भूगर्भिक संरचना के सन्दर्भ में उपलब्ध सतही एवं भूमिगत जल संसाधन की वर्तमान एवं भविष्य की दशाओं का आंकलन करना।
2. अध्ययन क्षेत्र में जल की माँग एवं पूर्ति के मध्य निरन्तर विस्तारित अन्तर के कारणों का विश्लेषण करना तथा जल प्रबन्धन का महत्व निर्धारित करना।
3. उपलब्ध जल संसाधन के प्रबन्धन द्वारा कृषित भूमि उपयोग की प्रतिशतता में वृद्धि करने हेतु अधिकतम उत्पादक फसल प्रतिरूप के विकास के महत्व को उजागर करना।
4. कृषि आधारित अर्थव्यवस्था के समेकित विकास में जल संसाधनों के उचित प्रबन्धन की अपरिहार्यता सुनिश्चित करना।
5. औद्योगिक क्रियाकलापों हेतु जल की मांग को देखते हुए जल संसाधनों के विवेक सम्मत उपयोग एवं सतत विकास के लिए सुझाव देना।
6. जल की गुणवत्ता का मानक बनाये रखने के सन्दर्भ में विभिन्न प्रदूषणकारी तत्वों को पहचानकर, निवारण हेतु सुझाव प्रस्तुत करना।
7. राष्ट्रीय जल नीति 2012 के अनुसार सभी को स्वच्छ पेयजल उपलब्ध कराने की सुनिश्चितता में आने वाली समस्याओं की जानकारी प्राप्त कर अध्ययन क्षेत्र के लिए उनका समाधान प्रस्तुत करना।
8. प्रति व्यक्ति जल की उपलब्धता एवं जनसंख्या वृद्धि में सम्बन्ध की जानकारी प्राप्त कर भविष्य में जल की सम्भावित आवश्यकता को पूरा करने के लिए जल संसाधनों के संरक्षण आयोजन एवं प्रबन्धन हेतु ठोस सुझाव व कार्य योजना प्रस्तुत करना।

परिकल्पना

1. जनसंख्या वृद्धि के साथ–साथ जिले में प्रति व्यक्ति जल की उपलब्धता निरन्तर घटती जा रही है।
2. जल संसाधनों की कमी के साथ ही सिंचित क्षेत्र में भी निरन्तर गिरावट आ रही है।
3. जल संसाधन विकास उन्हीं क्षेत्रों में किया गया है, जहाँ आधारभूत संरचना पहले से ही विकसित है।
4. जल संसाधनों के विकास एवं प्रबन्धन के अभाव में अनुकूलतम भूमि उपयोग विकसित नहीं हो रहा है।
5. उपलब्ध जल संसाधनों के संरक्षण एवं संवर्धन के महत्व एवं आवश्यकता की जानकारी एवं जागरूकता को जन सामान्य में प्रचार–प्रसार की आवश्यकता है।

विधि–तंत्र

प्रस्तावित कार्य योजना प्राथमिक एवं द्वितीयक संमकों पर आधारित है तथा इनका परीक्षण अनुभवात्मक एवं प्रायोगिक विश्लेषण के आधार पर किया गया है।

प्राथमिक समंकों एवं जानकारी एकत्र करने के लिये एक प्रश्न समूह एवं सूची बनाई गयी है, जिसमें जनसंख्या, भू–स्वामित्व, जल संसाधन, सिंचाई, फसल प्रतिशत, वन, खनन एवं उद्योग से सम्बन्धित प्रश्न सम्मिलित है, साथ ही कुओं के पुनर्भरण, उत्पादन एवं क्रियाकलापों में होने वाला परिवर्तन, आय में परिवर्तन इत्यादि जैसी सूचनाओं के

विषय में जानकारी एकत्र की है। प्राथमिक समंकों के विपरीत द्वितीयक समंकों को व्यक्तिगत साक्षात्कार विधि द्वारा प्राप्त नहीं किए जाकर विभिन्न सरकारी संस्थाओं, संगठनों जैसे सार्वजनिक स्वास्थ्य अभियांत्रिकी विभाग– जयपुर, सवाईमाधोपुर, केन्द्रीय शुष्क क्षेत्र अनुसंधान संस्थान जोधपुर, मौसम विभाग जयपुर, मृदा सर्वेक्षण विभाग–जयपुर एवं सवाईमाधोपुर, आर्थिक एवं सांख्यिकी निदेशालय–जयपुर, केन्द्रीय व राजकीय भू–जल बोर्ड–जयपुर सिंचाई विभाग सवाईमाधोपुर एवं जयपुर एवं भारतीय भूगर्भशास्त्र विभाग–जयपुर इत्यादि द्वारा प्राप्त किए गये है। साथ ही विभिन्न विभागों की वेबसाईट से नवीनतम जानकारियाँ एकत्र की हैं।

एकत्र समंक एवं जानकारियों को अध्ययन के उद्देश्य एवं परिकल्पना के अनुसार उपयुक्त रूप से तालिकाबद्ध किया गया है। जिससे उचित परिणाम प्राप्त किया जा सके। क्षेत्र से सम्बन्धित मानचित्र तैयार किए गये है जैसे – भौतिक, मौसम मानचित्र, मृदा, ढाल, नदियाँ, भू–आकृति, जल संसाधन से सम्बन्धित विविध मानचित्र एवं जनसंख्या घनत्व एवं अन्य महत्वपूर्ण विकासगत कारकों पर आधारित मानचित्र। सूदूर संवेदन व जी.आई.एस. तकनीकों की सहायता से क्षेत्र की भूमि उपयोग में वास्तविक प्रतिरूप प्रदर्शित करने हेतु विस्तृत भूमि उपयोग मानचित्र बनाऐं है। अध्ययन को अधिक विस्तृत बनाने के उद्देश्य से भारतीय सर्वेक्षण–विभाग की स्थलाकृतिक मानचित्रों की सहायता से संसाधन विकास कार्यक्रम हेतु जल संभरणों का चयन किया है। विभिन्न जल संभरणों के संसाधन विकास की समस्या को पहचानने के लिये सभी सूचनाएँ एवं आँकड़ो का सारणीकरण एवं विश्लेषण किए गये है। प्रस्तावित शोध कार्य करने के लिए समंक एकत्रण विश्लेषण एवं मानचित्र के लिए क्षेत्र अध्ययन इकाई (Area Study Unit) तहसील अनुसार किया गया है।

साहित्य समीक्षा

जल संसाधन प्रबंधन मानव सभ्यता का एक अभिन्न अंग है। जल संसाधनों का कुप्रबन्धन ही प्राचीन काल में सिन्धु, मेसोपोटामिया एवं मिश्र जैसी सभ्यताओं के पतन का कारण बना। प्रारम्भ में यहाँ पर्याप्त जल उपलब्ध था किन्तु अतिदोहन के परिणामस्वरूप धीरे–धीरे जल संसाधनों की सम्भाव्यता गिरती चली गई। विश्व के अनेक देश आज भी जलाभाव की दशा का सामना कर रहे हैं। यह अभाव न केवल सिंचाई में ही अपितु मानव एवं पशुओं हेतु पेयजल में भी दिखता है।

शोधार्थी द्वारा किये जा रहे विषय के क्षेत्र में क्रमबद्ध व लिपिबद्ध साहित्य का अभाव रहा है। शोध के विषय में सम्भवतः प्रथम उल्लेख जलसंसाधन उपलब्धता एवं विकासशील देशों के सन्दर्भ में ज्ञात करने का प्रथम प्रयास डिट्रिच और हैन्डेरून ने (1963) किया। उन्होंने अनुमान लगाया कि 75 विकासशील देशों की 10 प्रतिशत से भी कम जनसंख्या को घरेलू जल सुविधा प्राप्त है। इससे ग्रामीण और शहरी दोनों जनसंख्या शामिल है। यह कार्य विशेष रूप से महत्वपूर्ण था क्योंकि इसने वैश्विक आधार पर विकास के एक तत्व के रूप में घरेलू जलापूर्तियों के विचार की शुरूआत के संकेत दिए। इसी प्रकार विश्व स्वास्थ्य संगठन ने विभिन्न विकासशील देशों पर किए गए अपने सर्वेक्षण के आधार पर यह अनुमान लगाया कि विश्व की अधिकांश जनसंख्या विकासशील देशों के ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करती है। जिसकी मात्र 12 प्रतिशत जनसंख्या ही सुरक्षित जलपूर्ति तक अपनी पहुँच रखती है।

संसाधनों के सम्भावताओं का विभिन्न क्षेत्रों के विशेषज्ञों जैसे पर्यावरणविद्, भूगोलविद्, जल वैज्ञानिक आदि के द्वारा परम्परागत एवं सूदूर संवेदन तकनीक के माध्यम से अध्ययन किया गया है। देश की प्राकृतिक सम्पत्ति का विस्तृत अध्ययन एवं विभिन्न संसाधनों की गुणात्मक एवं मात्रात्मक सूचनाओं का संग्रह विज्ञान एवं तकनीकी विभाग के राज्य सूदूर संवेदन अनुप्रयोग केन्द्र, जोधपुर एवं राष्ट्रीय सूदूर संवेदन एजेन्सी, हैदराबाद द्वारा सूदूर संवेदी तकनीक के माध्यम से किया गया है।

स्वतंत्रता के पश्चात् जल प्रबन्धन हेतु अनेक उपाय एवं अनुसंधानात्मक कार्य हाथ में लिए गए जिसके तहत, राष्ट्रीय स्तर पर केन्द्रीय जल आयोग की स्थापना की गई। डॉ. स्वामीनाथन (1991) ने सन्तुलित जल एवं भूमि संरक्षण तकनीक का सुझाव दिया। मौली और पार्थसारथी ने 35 केन्द्रों के पिछले 108 सालों के वर्षा आधारित आँकड़ों पर इस सम्बन्ध में महत्वपूर्ण तथ्यों को सामने लाया। डबलिन (आयरलैण्ड) 1992 में विश्व मौसम अधिवेशन आयोजित किया गया। जिसमें विश्व जल परिषद् की स्थापना के साथ–साथ जल संरक्षण से सम्बन्धित कुछ त्वरित उपायों को हाथ में लिए जाने का भी सुझाव दिया गया।

भारत में सतत् विकास कार्यक्रम की संकल्पना के तहत जल संसाधन पर बहुत से कार्य किए गए हैं। इसरो द्वारा प्रायोजित सतत् विकास हेतु समन्वित मिशन इस क्षेत्र में एक बुहत ही महत्वपूर्ण कदम है। विभाग द्वारा अनेक परियोजनाओं का वित्तियन किया गया और देश के अधिकांश महत्वपूर्ण क्षेत्रों को इसके तहत वैज्ञानिक वियोजन के समन्वित अध्ययन को प्रारम्भ किया।

अनेक वैज्ञानिकों द्वारा जल संसाधनों का अध्ययन किया गया एवं भारतीय भूगोलवेत्ताओं एवं वैज्ञानिकों, जिन्होंने बाढ़ की समस्या एवं नदी परियोजनाओं का अध्ययन किया था, का भी ध्यान आकर्षित किया। हमारे देश में ग्रामीण जलापूर्ति के क्षेत्र में प्रथम व्यवस्थित अध्ययन मजूमदार (1943), गुप्ता व भावे (1971), क्षीरसागर (1971), रामविलास (1980), सैनी (1996) द्वारा किया गया। इन सबने महाराष्ट्र के भौमिक जल संसाधन एवं कुओं पर ध्यानकर्षित किया। हेम (1970) एवं जोशी (1992) ने अपने अध्ययन में प्राकृतिक जल की रासायनिक विशेषताओं एवं विश्लेषणात्मक उपागम को प्रस्तुत किया। त्रिवेदी (1986) ने हरितक्रांति का भारतीय किसानों पर प्रभाव का मूल्यांकन किया। जबकि घोष (1995) ने भारत के ग्रामीण क्षेत्र की जलापूर्ति के आधारभूत सिद्धान्तों का वर्णन किया। राज्य के भौगोलिक प्रदेशों एवं जिला स्तरीय अध्ययन से सम्बन्धित अनेक प्रकाशित लेख एवं वेबसाइट उपलब्ध है।

एस.ए.सी. (SAC-1943) ने गुजरात एवं राज्स्थान राज्य के जल सम्भव्यता मानचित्र तैयार किये हैं। सिंह (1976) ने राजस्थान के भू–जल सम्भाव्यता क्षेत्रों को खोजने हेतु दूर संवेदन के अनुप्रयोगों को वर्णित किया है। सहाय (1980) ने गुजरात के पंचमहल जिले में जल संसाधन प्रबन्धन हेतु अंतरिक्ष आधारित तथ्यों का अवलोकन किया। राजस्थान का भौम–जल एटलस राज्य के दूर संवेदी अनुप्रयोग केन्द्र, जोधपुर द्वारा भौम–जल विभाग राजस्थान सरकार, जोधपुर द्वारा जल संभरण विकास एवं मृदा संरक्षण विभाग, जयपुर के सहयोग से राजस्थान का जल संकट एटलस भी बनाया गया है।

सत्यनारायण व ध्रुवनारायण (1965) ने मैसूर जिले का सिंचाई स्तर तथा कृषि विकास का अध्ययन कर कृषि विकास की समस्याओं को उजागर किया। कृष्ण (1969) ने भारत के अर्द्ध शुष्क क्षेत्र में फसलों के लिए जल प्रबन्धन पर लेख लिखा जिसमें उन्होंने फसलों के अनुसार सिंचाई तथा जल पुनर्भरण, जल निकासी के प्रबन्ध का विवेचन किया।

माजिद हुसैन (1976) ने भी कृषि उत्पादकता निर्धारण हेतु प्रदेश की प्रत्येक संघटक इकाई में उपजाई गई फसल का क्षेत्र, उत्पादन व मूल्य का तत्सम्बन्धित क्षेत्र व फसल के कुल उत्पादन मूल्य के सम्बन्ध को आधार माना। हुसैन ने इस विधि के आधार पर उत्तर प्रदेश के कृषि उत्पादक प्रदेशों का निर्धारण किया। राष्ट्रीय आर्थिक एवं व्यवहारिक शोध संस्थान, नई दिल्ली द्वारा प्रकाशित ''कन्ट्रीब्यूशन ऑफ इरीगेशन टू प्रोडक्शन एण्ड प्रोडक्टिविटी'' एस.पी. लाल (1985) ने कृषि आधुनिकीकरण के आधारभूत साधन सिंचाई के प्रभाव को अन्य कृषि आधुनिकीकरण के उपादानों पर पड़ने वाले प्रभाव का अवनयन किया है।

इन्दिरा गांधी नहर परियोजना क्षेत्र में हुए कृषि आधुनिकीकरण का अध्ययन आर.के. गुर्जर (1987) ने किया है जिसमें उन्होंने 1971 से 1981 तक हुयी कृषि क्रांति का सामयिक आंकलन कर क्षेत्र में कृषि विकास हेतु सुझाव प्रस्तुत किये हैं। हिफजार रहमान (1993) ने सतत् विकास, पर्यावरण तथा जनसंख्या का तुलनात्मक अध्ययन करते हुए संतुलित परिस्थितिकी हेतु सुझाव पेश किये। आर.सी. माहेश्वरी, सी.पी. बोहरा (1996) ने शोध पत्र में प्राकृतिक संसाधन तथा जैव शक्ति संसाधन आधारित सतत् कृषि विकास हेतु योजना प्रस्तुत की। वी.के. राय/बी.के. सिंह (2002) ने कृषि विकास के लिए सतही जल की गुणवत्ता का मूल्यांकन किया जो कृषि विकास हेतु सिंचाई की उपयुक्तता को प्रमाणित करता है। उन्होंने सतही जल की गुणवत्ता निर्धारण हेतु 33 भिन्न–भिन्न कुओं से चयनित नमूनों (Representative samples) को लिया। इन नमूनों का रासायनिक परीक्षण करके TDS (Total dissolved solids) सिलिकन, कैल्शियम, क्लोरिन, मैग्नीशियम, सोडियम, आयरन और बाईकार्बोनेट, EC (Electrical conductivity), pH, sodium absorption ratio (SAR) गणना करके US salinity diagram के आधार पर सिंचाई के उपयोग के लिए जल की उपयुक्तता के बारे में विस्तृत जानकारी दी। के.एल. गुर्जर ने अपने पीएच.डी. शोध में मोरेल कमाण्ड क्षेत्र में भूमि मूल्यांकन व फार्म प्रबन्धन हेतु योजना प्रस्तुत की। उन्होंने सिंचाई गहनता, दूरस्थ संवेदन तकनीक तथा वहन उपयुक्तता वर्ग (capability class) आदि को आधार माना।

वैंकटेश्रैया राय और वासुदेव राय (2002) ने श्री काकूलम जिले में ''ग्रामीण पर्यावरण में जल संसाधन विकास का महत्व'' नामक लेख में जल संसाधन के मूल्यांकन हेतु हाईड्रोजियोलॉजिकल आंकड़े अध्ययन क्षेत्र में विभिन्न कुओं से जल के नमूने, रासायनिक परीक्षण तथा नागावेली नदी बेसिन के विभिन्न भागों का जियोलोजिकल सर्वे किया एवं तद्नुसार अपने विचार प्रस्तुत किये। मानसिंह (2004) ने माही बजाज सागर परियोजना बाँसवाड़ा के सिंचित क्षेत्र में पर्यावरण पर जनजातीय क्षेत्र का प्रभाव पर अध्ययन किया।

स्वच्छ जलापूर्ति से सम्बन्धित अनुसंधान एवं विकास नीतियों के उन्नयन एवं समन्वयन के उद्‌देश्य से यू.एन. सचिवायल, यू.एन.डी.पी., डब्ल्यू.एस.ओ. (W.H.O.), आई.बी.आर.डी., एफ.ए.ओ., यूनिसेफ एवं ओ.ई.सी. के सहयोग से मॉन्ट्रियल में ग्रामीण जलापूर्ति एवं स्वच्छता हेतु एक तदर्थ कार्यशाला का गठन किया गया। जल संसाधन की गुणवत्ता एवं मात्रा से सम्बन्धित अनेक अध्ययन कार्य अलग–अलग विशेषज्ञों द्वारा किए गए हैं। इस क्षेत्र में नीरी की भी महत्वपूर्ण भूमिका रही है। ग्रामीण विकास मंत्रालय की प्रमुख पत्रिका ''कुरूक्षेत्र''एवं ''योजना'' का जल संसाधन एवं प्रबन्धन विषय पर केन्द्रित अंक विशेष शोधपरक जानकारी उपलब्ध कराता है।

अध्ययन क्षेत्र का परिचय

सवाईमाधोपुर जिला राजस्थान के दक्षिणी–पूर्वी सीमांत भाग में 25′45 से 26′41 उत्तरी अक्षांश तथा 75′59 से 77′00 पूर्वी देशांतर के मध्य समुद्र तल से 370–600 मीटर की ऊंचाई पर स्थित है। जिले के सीमावर्ती जिले कोटा, बूंदी, टोंक, जयपुर, करौली व दौसा है। दक्षिणी पूर्व में मध्यप्रदेश राज्य से सीमा लगी हुई जिले का क्षेत्रफल 5043 वर्ग कि.मी. है। सवाईमाधोपुर जिले में 8 तहसील, 8 उपखण्ड, 6 पंचायत समिति, 752 राजस्य ग्राम हैं इसमें 2 नगरपालिका है।

सवाईमाधोपुर जिले की कुल जनसंख्या 13,35,551 व्यक्ति है जो भारत की कुल जनसंख्या का 1.95 प्रतिशत है। जिसमें पुरूष 704031 व महिलाऐं 631520 है। जिले का लिंगानुपात 897 है व जनघनत्व 297 व्यक्ति प्रति वर्ग कि. मी. है। यह अर्द्ध शुष्क जलवायु वाला जिला है। यहां का औसत अधिकतम तापमान 45.6^{0} सेन्टी. व न्यूनतम 3.50 सेन्टी. है एवं औसत तापमान 26.8′ सेन्टी. है। जिले में वार्षिक वर्षा 66.59 से.मी. होती है।

भूमिगत जल गुणवत्ता सर्वेक्षण

तालिका संख्याः 1.1

जिला सवाईमाधोपुरः तहसील अनुसार गाँवों की संख्या–भूमिगत जल की गुणवत्ता के सर्वे हेतु लिय गये जल के नमूनों की संख्या 2014–15

क्र.सं.	तहसील	गाँवों की संख्या	लिये गये जल के नमूनों की संख्या
1.	गंगापुर सिटी	119	170
2.	बामनवास	141	201
3.	बौंली	100	150
4.	मलारना डूंगर	61	81
5.	सवाईमाधोपुर	147	235
6.	चौथ का बरवाड़ा	66	98
7.	खण्ड़ार	126	225
8.	वजीरपुर	–	–
	योग	**760**	**1160**

स्त्रोतः तहसील अनुसार विभिन्न जल गुणवत्ता समस्याओं से प्रभावित गाँवों की संख्या
शोधार्थी द्वारा संग्रहित आँकड़े

(गुणवत्ता के मापकः 1. फ्लोराईड, 2. क्लोराईड, 3. नाइट्रेट, 4. टीडीएस, 5. लोहा, 6. आर्सेनिक)

क्र.सं.	तहसील	फ्लोराईड >1.5 PPm	क्लोराईड >1000PPm	नाइट्रेट >100 PPm	टीडीएस >2000PPm	लोहा >1.0PPm	आर्सेनिक >0.05PPm
1.	गंगापुर सिटी	22	00	37	11	00	00
2.	बामनवास	60	03	17	41	00	00
3.	बौंली	04	00	50	08	00	00
4.	मलारना डूंगर	22	07	20	45	00	00
5.	सवाई माधोपुर	13	03	14	14	00	00
6.	चौथ का बरवाड़ा	10	04	13	12	00	00
7.	खण्ड़ार	07	05	11	14	00	00
	योग	**138**	**22**	**162**	**145**	**00**	**00**

स्त्रोतः गुणवत्ता के सर्वे हेतु लिए गये जल नमूनों के आधार पर स्वयं द्वारा विश्लेषित

सवाईमाधोपुर जिले में कुल गाँवों की संख्या 760 है। अध्ययन क्षेत्र के विभिन्न गांवों से लिये गये जल नमूनों की जाँच के आधार पर यह पाया गया है कि 138 गाँव ऐसे है जहाँ फ्लोराइड़ की मात्रा न्यूनतम स्वीकृत सीमा 1.5 पीपीएम से अधिक है। WHO एवं भारत सरकार द्वारा निर्धारित जल गुणवत्ता के मानकों में फ्लोराइड़ की न्यूनतम स्वीकृत सीमा 1–1.5 पीपीएम मानी गयी है अर्थात् जल में उससे अधिक मात्रा में फ्लोराइड़ युक्त जल का सेवन करने पर मानव शरीर में दाँतों की बीमारी, शारीरिक अंगों में विकृति, हड्डियों का टेढ़ा–मेढ़ा होना, खून की कमी तथा वनज घटने जैसे हानिकारक प्रभाव दृष्टिगत होते हैं। नाइट्रेट एक अन्य महत्वपूर्ण तत्व है जो जल की गुणवत्ता का निर्धारण करता है। नाइट्रेट की न्यूनतम स्वीकृत सीमा (WHO एवं भारतीय मानक अनुसार) 45-100 PPm है। अध्ययन क्षेत्र के विभिन्न गाँवों से लिये गये जल नमूनों की जाँच के आधार पर यह पाया गया है कि 162 गाँवों ऐसे है जहाँ उक्त सीमा से अधिक नाइट्रेट पाया गया है।

नाइट्रेट की अधिक मात्रा युक्त जल का उपयोग करने से शिशुओं में नीला वर्ण बीमारी (Blue Baby Syndrom) होती है जिसमें उन्हें उल्टियाँ होती है व त्वचा का रंग गहरा हो जाता है अतः यह बहुत ही खतरनाक यौगिक है। टीडीएस अध्ययन क्षेत्र के विभिन्न गाँवों से लिये गये जल के नमूनों में पाया गया है कि जिले के 145 गाँव ऐसे हैं जहाँ टीडीएस की मात्रा न्यूनतम स्वीकृत सीमा 2000 पीपीएम से अधिक हैं। क्लोराइड की न्यूनतम स्वीकृत सीमा 1000 पीपीएम है। जबकि अध्ययन क्षेत्र के 22 गाँव ऐसे हैं जहाँ यह सीमा से अधिक पाई गई है। तालिका संख्या 1. 1 में तहसील अनुसार गाँवों की संख्या, भूमिगत जल की गुणवत्ता, सर्वे हेतु लिये गये जल के नमूनों की संख्या एवं तहसील अनुसार विभिन्न जल गुणवत्ता की समस्याओं से प्रभावित गाँवों की संख्या को भलीभाँति दर्शाया गया है। नमूनों का अध्ययन एवं विश्लेषण उपयुक्त प्रयोग शालाओं एवं सरकारी कार्यालयों से प्राप्त किये गये हैं।

समस्याऐं

जल प्रदूषण का असर सतही जल पर ही नहीं बल्कि भूमिगत जल पर भी उसी प्रकार पड़ रहा है। भूमिगत जल मुख्य रूप से सतह पर होकर ही भूमि में प्रवेश करता है। भूमिगत जल का प्रदूषित होना विशेषतः कृषि अपशिष्ट पदार्थों, औद्योगिक क्षेत्रों से निःस्तत रासायनिक तत्व तथा ग्रामीण एवं नगरीय क्षेत्रों से निकलने वाले कचरों द्वारा होता है। ये प्रदूषण भू–सतह से जल के साथ निष्पादित होकर भूजल में मिल जाते है। इसी प्रकार कृषि अपशिष्ट

सिंचाई के दौरान जल के साथ निक्षालन द्वारा अन्तःस्पन्दित हो जाते है। तीव्र गति से बढ़ रही जनसंख्या द्वारा ग्रामीण एवं नगरीय अपशिष्टों का विसर्जन भी उपयुक्त प्रबन्धित तरीके से न करके अवैज्ञानिक ढंग से कहीं भी डाल दिया जाता है, जो वर्षा जल में मिश्रित होकर भूमिगत हो जाता है। इसके अतिरिक्त भू–सतह पर स्थित जल भण्डारों (तालाबों एवं झीलों) के प्रदूषित होने पर उनका प्रदूषित जल निस्पन्दन द्वारा भूमिगत होकर भी भूजल को प्रदूषित कर देता है। कुओं तथा हैडपम्पों द्वारा भी भू–जल प्रदूषण होता है। कारखानों से विसर्जित विषैले रसायन कुएं के आस–पास के क्षेत्र में अन्तःस्पन्दित होकर भू–जल को प्रदूषित करते हैं। विभिन्न स्त्रोतों द्वारा भूजल को तीव्र गति से प्रदूषित किया जा रहा है। जल स्त्रोतों में प्रदूषकों के प्रवेश से जल की भौतिक, रासायनिक एवं जैविक क्रिया रूक जाती हैं। प्रदूषित जल क्षेत्र अथवा स्त्रोत की विशेषताऐं उसमें मिलने वाले प्रदूषकों की मात्रा एवं गुण से नियंत्रित होती है। कृषिगत, घरेलू एवं औद्योगिक कारक सीधे जल स्त्रोत को प्रभावित कर सकते है। सवाईमाधोपुर जिले के भूमिगत जल के 1160 नमूने भिन्न–भिन्न क्षेत्रों से लिये गये। ये नमूने भौतिक एवं रासायनिक विश्लेषण हेतु लिए गए हैं।

जलीय रासायनिक प्रदूषक

यह अत्यन्त व्यापक किस्म का प्रदूषण है जिसमें कुल घुलनशील तथ्य क्षारीयता, अम्लीयता, कठोरता, क्लोराइड, धातु तत्व, कार्बनिक पदार्थ, पोषक तत्व इत्यादि में से एक अथवा अनेक हो सकते हैं। इस प्रकार के पानी को शुद्ध करने के लिये विशेष विधि अथवा विधियों की आवश्यकता होती है।

पारा (Mercury)

पारा औद्योगिक एवं कृषिगत बहिःस्त्रावों से मुख्यतः जल में प्रवेश करता है। पारा एक प्रोटोप्लाज्मिक प्रकृति का विषैला तत्व है। यह मानव शरीर में गुर्दा, लीवर, प्लीहा, हड्डियों को हानि पहुंचाता है।

सीसा (Lead)

पानी में सीसे की मात्रा औद्योगिक अपशिष्टों से बढ़ती है, जो एक जहरीला पदार्थ होने के कारण विभिन्न बीमारियों के माध्यम से जन–स्वास्थ्य को प्रभावित करता है।

जस्ता (Zine)

औद्योगिक प्रक्रियाओं के परिणामस्वरूप जल में विभिन्न जस्ते के यौगिक हानिकारक प्रभाव छोडते है, जिनमें जिंक ऑक्साइड व जिंक क्लोराइड प्रमुख है। जल में जिंक क्लोराइड की मात्रा अधिक होने पर ये फेफड़ों को खराब कर देते हैं।

फ्लोराइड (Floride)

जल में फ्लोराइड की मात्रा 1 पी.पी.एम. से अधिक नहीं होनी चाहिए। इससे अधिक मात्रा में फ्लोराइडयुक्त जल का सेवन करने पर मानव शरीर में दांतों की बीमारी, शरीरिक अंगों में विकृति, हड्डियों का टेढ़ा–मेढ़ा होना, खून में कमी तथा वजन घटने जैसे हानिकारक प्रभाव दृष्टिगत होते हैं।

नाइट्राइट (Nitrite)

नाइट्राइट की अधिक मात्रा युक्त जल का उपयोग करने से शिशुओं में नीला वर्ग बीमारी होती है, प्रदूषक तत्व विभिन्न स्त्रोतों से जल में मिश्रित होकर मानव–जीवन पर दुष्प्रभाव छोड़ते है।

जल संरक्षण

वर्तमान समय में तेज गति से बढ़ती जनसंख्या, शहरी विकास, कृषि एवं औद्योगिक विकास, कृषि में बढ़ते रासायनिक उर्वरकों का उपयोग एवं जल के बढ़ते दुरूपयोग एवं संवेदनहीनता के कारण जल की मांग में तेजी आयी है। वर्षा जल का प्राकृतिक रूप से पुनर्भरण जगह–जगह पर मानव द्वारा पक्के फर्श के निमार्ण कारण पूर्णतः नहीं हो रहा है। इसके विपरीत कुओं, नलकूपों एवं हैण्डपम्पों द्वारा भू–जल का अत्यधिक दोहन किया जा रहा है।

लोगों द्वारा घर–घर में हैण्डपम्प एवं खेत–खेत में बोरिंग लगाये जाने से भी भू–जल का अंधाधुन्ध दोहन होने लगा है, जिसके परिणामस्वरूप भू–जल स्तर प्रतिवर्ष गिर रहा है एवं भू–जल की गुणवत्ता में भी गिरावट आ रही है।

इस जल संकट के समाधान में अधिकाधिक वर्षा जल का पुनर्भरण किया जाना एक महत्वपूर्ण प्रयास हो सकता है। छत से प्राप्त वर्षा जल को निम्न स्त्रोतों में पुनर्भरण कर उपयोग में लाया जा सकता है, जिससे व्यर्थ में बहने वाले जल को अपव्यय होने से बचाया जा सके।

भूजल में पुर्नभरण निम्न प्रकार/विधि से किया जा सकता हैः

- नलकूप द्वारा पुनर्भरण
- हैण्डपम्प द्वारा पुनर्भरण
- टांका द्वारा संचयन एवं भू–जल पुनर्भरण
- शाफ्ट एवं बोर वेल द्वारा भू–जल पुनर्भरण
- कूप द्वारा पुनर्भरण
- शाफ्ट द्वारा भू–पुनर्भरण
- परकोलेशन टैंक द्वारा भू–जल पुनर्भरण
- गैबियन द्वारा भू–जल पुनर्भरण
- चैक डेम द्वारा भू–जल पुनर्भरण
- उपसतही अवरोध/उपसतही डाईक द्वारा भू–जल पुनर्भरण

सुझाव

जिले में वर्षा की पर्याप्तता के बावजूद भी अपर्याप्त जल प्रबन्धन के कारण ग्रीष्म ऋतु में जल की अत्यधिक कमी प्रकट होती है। अतः यह आवश्यक है कि विभिन्न प्रबन्धकीय क्रियाओं के माध्यम से अध्ययन क्षेत्र में जल समस्याओं को कम करने के सुझावों पर अमल किया जा सके। ये सुझाव निम्न प्रकार हैंः

- वर्षा जल संरक्षण प्रक्रिया द्वारा भूमिगत स्त्रोतों के जल संरक्षण एवं जल स्तर में वृद्धि, जल स्तर के रिक्तीकरण में कमी के साथ–साथ जल की गुणवत्ता को सुधारने में भी सहायक सिद्ध हो सकता है। वर्षा जल संग्रहण के तरीकों में से छत से वर्षा जल संग्रहण का तरीका सबसे प्रचलित है जिसे ''जल कटाई'' के नाम से जाना जाता है।
- वर्षा का जल ग्रामीण क्षेत्रों में प्राकृतिक अथवा कृत्रिम रूप से निर्मित टाँकों में संग्रहीत किया जाना चाहिए।
- जल की कमी वाले क्षेत्रों में पहली प्राथमिकता मनुष्यों और पशुओं के लिए पेयजल उपलब्ध कराने की होनी चाहिए, द्वितीय प्राथमिकता कृषि को जो कि अध्ययन क्षेत्र की जीवन रेखा है तथा तृतीय प्राथमिकता बचे हुए जल को उद्योग को देने के लिए दी जानी चाहिए।
- कृषि में फसल एवं फसली प्रारूप को बदलकर एवं नवीन वैज्ञानिक तरीकों द्वारा सिंचाई करके कृषि में जल की मांग को कम किया जा सकता है। इसके अन्तर्गत कम फसल अवधि वाले पौधे, उच्च उत्पादकता वाले पौधे जिन्हें अधिक जलापूर्ति की आवश्यकता न हो, को उगाया जा सकता है।
- प्राचीन तालाबों व बावड़ियों के पानी को शुद्ध रखने के लिए तालाबों में गंदे पानी के नालों को गिरने से रोकना चाहिए तथा आम जनता द्वारा विभिन्न प्रकार से तालाबों में फैलायी जाने वाली गंदगी से रोकना चाहिए। बावड़ियों के ऊपर से ढ़कने की व्यवस्था करनी चाहिए ताकि पानी के अन्दर गिरने वाले कचरे को रोक सके।

- नहरों की समय–समय पर मरम्मत तथा साफ–सफाई की व्यवस्था करनी चाहिए ताकि कृषकों को समय पर स्वच्छ जल प्राप्त हो सके। कृषकों को समय–समय IMTI में कृषक प्रशिक्षण केन्द्र पर प्रशिक्षण लेना चाहिए ताकि कृषि में होने वाले अनावश्यक पानी खर्च को कम किया जा सके।
- नदियों के जल में औद्योगिक क्षेत्रों से छोड़े जाने वाले गंदे पानी व अवशिष्टों को आने से रोकना चाहिए तथा पानी को दुबारा से ट्रीटमेंट करके काम में लिया जा सकता है।
- जल स्त्रोतें के वाष्पीकरण पर नियंत्रण एक अन्य उपाय है, जिसमें जल संग्राहकों की ऊँचाई वाले स्थानों पर बनाना, जल संग्राहक की खुली सतह को कम करना, कृत्रिम जल संग्रहण संरचनाओं का निर्माण करना, वाष्पीकरण के लिए उत्तरदायी उष्मा को कम करना एवं वायु गति रोधक लगाना जैसे तरीकों द्वारा वाष्पीकरण को कुछ सीमा तक नियंत्रित किया जा सकता है।
- शहरी एवं ग्रामीण जलापूर्ति वाले क्षेत्रों में पेयजल को बढ़ाने के लिए एक कुशल जलापूर्ति तन्त्र की अत्यधिक आवश्यकता है। जंग लगे हुए एवं बंद जलापूर्ति को बदलना एवं समस्याग्रस्त क्षेत्रों में प्राथमिकता से जलापूत्रि करना आदि जल प्रबन्धन की दृष्टि से कुशल जलापूर्ति तन्त्र के रूप में विकसित किया जा सकता है।
- जल को उचित शुद्धिकरण के पश्चात् जल के सिंचाई, उद्योग एवं भूमिगत जल स्त्रोतों के पुनर्भरण एवं नगर पालिका के लिए पुनः उपयोग में लिया जा सकता है।
- नलकूपों की संख्या कम कर देनी चाहिए ताकि भूमिगत जल स्तर को पुनः ऊपर उठाया जा सके, क्योंकि यह अत्यधिक नीचे जा चुका है।
- सीमेन्ट वाले पक्के अवरोधक और बाँध नदी के बहाव की दिशा में अनेक स्थानों पर बनाने चाहिए। जिससे कि व्यर्थ बहने वाले जल को रोककर उस क्षेत्र का जल स्तर बढ़ाया जा सके साथ ही क्षेत्र का जल मुख्यउद्देश्यों/स्थानीय उद्देश्यों की पूर्ति के लिए उपयोग में लिया जा सके।
- जल संसाधन प्रबन्धन, जल संसाधनों को औद्योगिक बहिःस्त्राव से बचाकर, जल शुद्ध करके एवं जल पुनः उपयोग में लिया जा सकता है। इसके लिए जनता को जल की प्रत्येक बूंद के लिए जागरूक होना पड़ेगा। यह जागरूकता जनता में नुक्कड़ नाटक, फिल्म, स्लाईड आदि सार्वजनिक स्थानों पर दिखाकर लाई जा सकती है।

इस प्रकार अध्ययन क्षेत्र में जल की समस्या की गंभीरताा, बहुउद्देश्यीय प्रबन्धन कार्यक्रम जो कि पहले ही वर्णित किए जा चुके हैं आदि के बारे में विचार करते हुए योजनाओं के निर्माण एवं क्रियान्वयन की आवश्यकता है। वर्तमान में लोगों को रिक्त हो रहे जल संसाधनों के बारे में प्रेरित करने की आवश्यकता है जिससे की वे जल संसाधन स्त्रोत वर्तमान एवं भावी पीढ़ियों की आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकें।

***शोधार्थी**
भूगोल विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय,
जयपुर, राजस्थान

सन्दर्भ सूची

- केन्द्रीय भूमि जल बोर्ड, पश्चिमी क्षेत्र जयपुर, जल संसाधन मंत्रालय, भारत सरकार।
- जिला सांख्यिकीय रूपरेखा 2000 से 2014, सवाई माधोपुर आर्थिक एवं सांख्यिकी निदेशालय, राजस्थान, जयपुर।
- भूजल विभाग, राजस्थान सरकार, वर्षा जल संचयन, संरक्षण व भूजल पुनर्भरण विवरण।
- राष्ट्रीय पर्यावरण नीति 2008 एवं एजेण्डा 21, यू.एन. कॉन्फ्रेन्स ऑन एनवायरमेन्ट एवं डवलपमेन्ट, रियो डि जेनेरियो, ब्राजील 1992 (पर्यावरण एवं वन मंत्रालय, 2010–11)।